तिब्बत देश

'तिब्बत–देश' के तीस साल

'तिब्बत–देश' के इस अंक के साथ यह पत्रिका अपने अस्तित्व के 30 साल पूरे कर रही है। 1979 के अंत में जब हमारी एक छोटी सी मित्र मंडली ने इस पत्रिका के प्रकाशन का फैसला किया था तब हममें से किसी को नहीं पता था कि कब तक ऐसी पत्रिका की जरूरत रहने वाली है और हम इसे कब तक चला पाएंगे? संयोग से आज तीन दशक बाद भी यह पत्रिका चल रही है। भले ही आज की हमारी टीम को भी यह पता नहीं कि इसे कब तक चलाना है, पर यह एकदम स्पष्ट है कि इस पत्रिका को क्यों चलते रहना है? संक्षेप में आज भी 'तिब्बत–देश' का एजेंडा लगभग वही है जो पहले अंक के समय सोचा गया था –– तिब्बत में रुचि रखने वाले पाठकों को चीनी कब्जे में फंसे हुए तिब्बत के भीतर होने वाली घटनाओं, चीन के घटनाक्रम, विश्वमंच पर तिब्बत के हालात को प्रभावित करने वाले परिवर्तनों, तिब्बती शरणार्थी समाज के संघर्ष और तिब्बत से जुड़े भारतीय हितों और मुद्दों पर ज्यादा से ज्यादा जानकारी और विश्लेषण नियमित रूप से पेश करना। हमारे इन पाठकों में भारत के नीति निर्माता, सांसद और राजनेता भी हैं और विदेशी मामलों से जुड़े अधिकारी, पत्रकार, बुद्धिजीवी, विद्यार्थी और तिब्बत समर्थक संगठन और हिंदी पढ़ने वाले तिब्बती पाठक भी हैं।

पिछले तीस साल में लगभग पांच साल का समय ऐसा रहा जब पत्रिका के प्रकाशन में व्यवधान आया। अपने लंबे विदेश प्रवास और भारत लौटने पर अपनी दूसरी व्यवसायिक व्यस्तताओं के कारण इस व्यवधान की अधिकांश जिम्मेदारी संपादक के रूप में मेरी ही रही। पूरे तीस साल में शायद ही कोई ऐसा मौका रहा जब पत्रिका अपने ठीक समय पर प्रेस में गयी और ठीक समय पर आप पाठकों के हाथ में पहुंची। इसकी जिम्मेदारी भी काफी हद तक इस वालंटियर संपादक की रही क्योंकि अनुवादकों, ले–आउट आर्टिस्ट, फोटो एडिटर और प्रिंटर से तालमेल को जितने प्रभावी ढंग से किया जाना चाहिए, वह अपने दैनिक कामों से बचे हुए समय में नहीं हो पाता। लेकिन यह भी सच है कि पिछले 10–15 साल में हमने कोई अंक मिस भी नहीं किया। हां यह जरूर हुआ कि आर्थिक दबाव के कारण हमने अपने तीन–तीन अंकों की जगह पुस्तकाकार विशेषांक निकाले। पर सौभाग्य से इन विशेषांकों को आज भी भारत–तिब्बत संदर्भ में जानकारी से लबालब पुस्तकों के रूप में याद किया जाता है।

जब 1979 में हमारी मित्र मंडली ने 'तिब्बत–देश' पत्रिका के प्रकाशन की बात सोची थी तब इसकी जरूरत का संदर्भ आज के मुकाबले काफी अलग था। तब दलाई लामा के अपने देश से भाग कर भारत आने और तिब्बत पर चीन का पूरा कब्जा होने को बीस साल हो चुके थे। असहाय तिब्बत पर चीन की दादागीरी से पैदा अंतर्राष्ट्रीय सहानुभूति भी पानी के झाग की तरह लगभग गायब हो चुकी थी।

यह ऐसा दौर था जब तिब्बती शरणार्थियों की नई पीढ़ी पढ़ लिखकर भारत में उभर चुकी थी। दूसरे देशों में जा बसे तिब्बतियों ने अपने अनथक प्रयासों से अपने आसपास तिब्बत समर्थकों के स्थानीय छोटे–छोटे संगठन खड़े करने का प्रभावशाली सिलसिला शुरू कर दिया था। इन संगठनों की बदौलत कभी प्रदर्शनों के माध्यम से तो कभी बयानों और सेमिनार आदि के माध्यम से तिब्बत फिर से अंतर्राष्ट्रीय मीडिया का ध्यान आकृष्ट करने लगा था। नई शरणार्थी पीढ़ी के बूते पर निर्वासित सरकार भी नए तेवर के साथ एक प्रभावकारी अंतर्राष्ट्रीय संस्था के रूप में स्थापित हो चुकी थी।

एक बड़ा परिवर्तन 70 वाले दशक में चीन और अमेरिका सरकार के बीच शुरू हुआ नया हनीमून था जिसने दुनिया के राजनीतिक–सामरिक और आर्थिक घटनाक्रम को एकदम नई दिशा दे दी। अपने नए चीनी दोस्तों को खुश करने के लिए उत्साहित अमेरिका ने 1970 के पहले अर्धदशक में अचानक तिब्बत के नीचे से सैनिक सहायता का हाथ इस बेशर्मी के साथ खींचा कि तिब्बत के भीतर चलने वाला सशस्त्र आंदोलन 'चू–शी न्गा ड्रुग' एक झटके में भरभरा कर गिर गया। अमेरिका की इस शह पर चीनी सेना ने नेपाल की शाही सेना के साथ मिलकर इस तिब्बती गुरिल्ला सेना के सैंकड़ों सैनिकों को मार डाला और उनके सभी ठिकाने नष्ट कर दिए। इसका तिब्बती मनोबल पर बुरा असर पड़ा था। यह अलग बात है कि अपनी व्यापारिक सौदेबाजियों में चीन पर दबाव बनाए रखने के लिए ही सही, पर वाशिंगटन सरकार ने अपनी परंपरागत शैली में तिब्बत और दलाई लामा के प्रति 'नैतिक' समर्थन का अभियान भी चला रखा था। यही वह समय था जब पश्चिमी यूरोप भी अमेरिकी साये से बाहर निकलकर यूरोपीय बिरादरी के तौर पर अपनी अलग पहचान बनाने में लगा हुआ था। इसका लाभ तिब्बत के प्रति नए समर्थन के रूप में सामने आ रहा था। इधर भारत ने भी इसी दशक में चीनी दादागीरी की परवाह किए बिना बंगलादेश बनाकर और सिक्किम को भारत में शामिल करके उन लोगों को खासा उत्साहित कर दिया था जो भारत को चीन के मुकाबले एक मजबूत ताकत के रूप में देखना चाहते थे। इनमें तिब्बती समाज भी था। ऐसे में जरूरी था कि भारत की भाषा में भारत की जनता तक तिब्बत के बारे में जानकारी दी जाए और भारत के दूरगामी राजनीतिक–सामरिक हितों के संदर्भ में तिब्बत प्रश्न के महत्व को निरंतर रेखांकित किया जाए। 'तिब्बत–देश' का प्रकाशन इसी दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम था।

तीस साल का यह काल तिब्बत के मामले में बहुत महत्वपूर्ण घटनाओं वाला काल रहा है। इस दौर में तिब्बत के भीतर चीन सरकार ने धार्मिक और राजनीतिक दमन के ऐसे कई चक्र चलाए जो 'सांस्कृति क्रांति' के भयानक दौर की याद दिलाते थे। लेकिन इस दौर में तिब्बती जनता ने आजादी के प्रति अपनी ललक का भी लगातार प्रदर्शन किया। 1989 और 2008 में उसने पूरे तिब्बत में आजादी की आवाज बुलंद करके 'तिब्बत में हर कोई खुश है' और 'तिब्बत में सब कुछ ठीक–ठाक है' जैसे झूठे चीनी दावों का पर्दाफाश किया। जवाब में चीनी प्रशासक हू जिंताओ ने निहत्थे तिब्बती प्रदर्शनकारियों को फौजी टैंकों और बख्तरबंद गाड़ियों से कुचल कर दिखा दिया कि एक उपनिवेशवादी सत्ता कितनी क्रूर हो सकती है।

इसी काल में दलाई लामा को रिझाने के लिए आत्मविश्वास से भरपूर चीन सरकार ने उनके 'तथ्यपरक' प्रतिनिधिमंडलों को तिब्बत की यात्राओं पर आमंत्रित किया। यह बात अलग है कि तिब्बती प्रतिनिधियों ने अपनी इन यात्राओं में तिब्बत की जो असली तस्वीर देखी उसने चीन को भी आइना देखने पर मजबूर कर दिया। इसी काल में यूरोपीय संसद के सीधे अल्टीमेटम से डर कर चीन ने दलाई लामा के साथ बातचीत का नया सिलसिला शुरू किया। भले ही धर्मशाला को इस बातचीत के खोखलेपन को समझने में आठ साल लग गए लेकिन 'तिब्बत–देश' अपने लगभग हर अंक में धर्मशाला को चीन सरकार की ठगी के प्रति चेताता रहा। दुर्भाग्य से 'तिब्बत–देश' की ये सभी चेतावनियां सही निकलीं। बातचीत के इस काल में चीन ने तिब्बत में रेलगाड़ी पहुंचाने; लाखों हान चीनियों को तिब्बत में बसाकर तिब्बतियों को अपने ही देश में अर्थहीन अल्पसंख्यक बनाने; वहां सेना, संचार और विकास के माध्यम से अपनी उपनिवेशवादी जकड़ मजबूत करने; और बीजिंग ओलंपिक को ठीक–ठाक कर ले जाने के वे सारे लक्ष्य पूरे कर लिए जिनके बारे में 'तिब्बत–देश' हर कदम पर धर्मशाला को चेतावनियां देता रहा। दुर्भाग्य से धर्मशाला–बीजिंग डायलाग आज भी वहीं पर है जहां से वह नौ साल पहले शुरू हुआ था।

लेकिन इन दुर्भाग्य भरी घटनाओं के साथ–साथ 'तिब्बत–देश' अपने पाठकों और तिब्बती समाज को निरंतर ताजा जानकारी और बेबाक, स्वस्थ विश्लेषण जानकारी देने का देने का वह काम भी करता आ रहा है जिसकी एक लंबे काल तक चलने वाले स्वतंत्रता संग्राम को हमेशा जरूरत रहेगी। अपने इस यज्ञ की सफलता में हम अपने पाठकों की शुभकामनाओं और आशीर्वाद की हमेशा अपेक्षा रखेंगे।

– विजय क्रान्ति

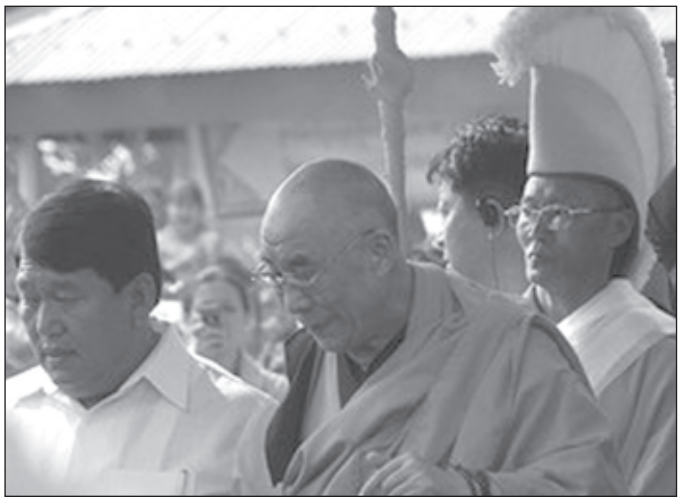

ईटानगर मे दलाई लामा के साथ अरुणाचल मुख्यमंत्री श्री खांडो दोरजी – मैत्री भाव

चीनी विरोध के बावजूद दलाई लामा ने अरुणाचल प्रदेश की यात्रा पूरी की

दलाई लामा की यात्रा ने अरुणाचल पर चीनी दावों के खोखलेपन को उजागर किया

चीन सरकार द्वारा बार–बार शोर मचाने, बंदर घुड़कियां देने और आपत्तियां जताने के बावजूद परमपावन दलाई लामा ने अरुणांचल प्रदेश की यात्रा शांतिपूर्वक पूरी की और इस यात्रा के मामले में उन्हें भारत सरकार का पूरा समर्थन मिला।

ईटानगर, 15 नवंबर हफ्तों तक राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय सुर्खियों में बने रहने के बाद, तिब्बती नेता दलाई लामा की अरुणाचल प्रदेश यात्रा आज सुबह राजभवन के हेलिपैड से पवन हंस के उड़ान भरने के साथ संपन्न हो गई। हेलिपैड पर जमा श्रद्धालुओं और अन्य लोगों ने अपने प्यारे गुरु को विदाई दी। मुख्यमंत्री दोर्जी खांडू, उनके मंत्रिमंडल के सदस्य और कुछ विधायक भी मौजूद थे।

दलाई लामा को 'विवादास्पद' क्षेत्र की यात्रा की इजाजत देने पर चीन ने भारत से सख्त नाराजगी जताई थी। इससे तिब्बती नेता की यह यात्रा अंतरराष्ट्रीय सुखयों में छा गई। चीन का दावा है कि अरुणाचल प्रदेष उसका हिस्सा है। इस दावे के पीछे चीन का एकमात्र तर्क यह है कि चूंकि तिब्बत चीन का हिस्सा है और तवांग 'दक्षिणी तिब्बत' है, इसलिए अरुणाचल प्रदेश उसका है।

इस हिमालयीय राज्य के हजारों लोगों को 74 वर्षीय दलाई लामा ने अपनी दैवी वक्तृत्व कला से सम्मोहित कर दिया। दलाई लामा अपने दस–सदस्यीय यात्रादल के साथ पिछले 8 नवंबर को तावांग पहुंचे थे। वे यहां चार दिन तक रहे।

तिब्बती नेता ने तसवांग में बहु–सुविधा वाले एक अस्पताल का उद्घाटन भी किया। इस अस्पताल को उन्होंने 20 लाख रु. दान दिया था।

परमपावन ने 12 नवंबर को तवांग से बोमडिला जाते हुए थुपसांग धरगेलिंग मठ को पवित्र किया और दिरंग में एक क्रिसमस ट्री लगाया। दिरंग स्टेडियम में श्रद्धालुओं को संबोधित करते हुए दलाई लामा ने बौद्ध धर्म के चार महान विचारों पर जोर दिया।

चीन सरकार द्वारा बार–बार शोर मचाने, बंदर घुड़कियां देने और आपत्तियां जताने के बावजूद परमपावन दलाई लामा ने अरुणांचल प्रदेश की यात्रा शांतिपूर्वक पूरी की और इस यात्रा के मामले में उन्हें भारत सरकार का पूरा समर्थन मिला।

यात्रा के सवाल पर भारत सरकार और दलाई लामा दोनों की फटकार सुनने के एक दिन बाद ही चीन ने भारत को परोक्ष लेकिन दुस्साहसपूर्ण धमकी दी कि वह भारत को 1962 के युद्ध जैसा 'सबक' फिर सिखा सकता है। सरकारी अखबार पीपुल्स डेली में चीन ने कहा कि भारत शायद 1962 की लड़ाई का सबक भूल गया है। एक भड़काऊ लेख में भारत पर प्रहार करते हुए चीन ने यह भी कहा कि भारत अपने एजेंडे को आगे बढ़ाने के लिए दलाई लामा का इस्तेमाल कर रहा है।

पीपुल्स डेली ने संभावित युद्ध जैसी स्थिति की चेतावनी देते हुए लिखा, ''भारत 1962 के सबक को भूलकर बार–बार चीन को उकसा रहा है। इसलिए, उसे युद्ध की चेतावनी देनी पड़ रही है। भारत एक बार फिर गलत रास्ते पर है।''

चाइना इंस्टीट्यूट्स ऑफ कॅन्टेम्पोरेरी इंटरनेशनल रिलेशंस के दक्षिण एशिया अध्ययन केंद्र में शोधकर्ता और चीनी विश्लेषक हू शिशेंग ने 9 नवंबर को कहा, ''दलाई लामा इस नाजुक मौके पर दक्षिण तिब्बत संभवतः इसलिए गए क्योंकि भारत ने इसके लिए उन पर दबाव बनाया। ऐसा करके, वे उस देश को खुश कर सकते हैं जिसने उन्हें वर्षों से मेहमान बनाकर अपने यहां रखा है। दक्षिण तिब्बत में दलाई लामा की उपस्थिति और गतिविधियों से इस क्षेत्र के लोगों में चीन–विरोधी भावनाएं पैदा हो सकती हैं। जैसे–जैसे टकराव बढ़ता जाएगा, चीन सरकार को उसका सामना करना होगा और उसी तरह सुलझाना होगा जिस तरह से 'भारत ने षडयंत्र रचा है'।''

हू ने लिखा, ''भारत दलाई लामा को दक्षिण तिब्बत की यात्रा के लिए प्रोत्साहित कर दशकों पुराने एक क्षेत्रीय विवाद को सुलझाने में उनका इस्तेमाल कर सकता है।''

हू के अनुसार, ''दक्षिण तिब्बत क्षेत्र में ऊंचाई पर स्थित एक तिब्बती मठ में जाकर दलाई लामा चीन के खिलाफ बोले। साथ ही, उन्होंने राजनीति से

प्रेरित बयान भी दिया। दलाई लामा ने अपने मेजबान देश के बचाव में कहा, 'मैं तावांग को भारत का अभिन्न अंग मानता हूं।' तिब्बत के मुद्दे पर उन्होंने कहा, 'तिब्बत में तिब्बती भावना बहुत मजबूत है। दूसरी तरफ, चीन ने सख्त रवैया अपनाया हुआ है।''

दूसरी तरफ, विदेश नीति के विषेशज्ञों का कहना है कि चीन भले ही इस मुद्दे पर जोर देता रहा है, लेकिन भारत ने केवल अपनी पुरानी नीति का ही अनुसरण किया। पूर्व राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार ब्रजेश मिश्र ने कहा. ''भारत ने इस मुद्दे पर वही किया है जो वह अतीत में करता रहा। चीन अपनी स्थिति पर जोर दे रहा है। लेकिन हमारा घोषित रुख यह है कि जब तक दलाई लामा राजनैतिक गतिविधियों में शामिल नहीं होते, वे भारत के किसी भी हिस्से में जाने के लिए स्वतंत्र हैं।''

लेकिन मिश्र ने यह भी कहा कि चीन ने इस मुद्दे पर खुलकर अपने रुख पर जोर देना शुरू कर दिया है। यह पूरे मामले में एकमात्र नई चीज है। यह पूछे जाने पर कि क्या भारत ने अरुणाचल पर अपने रुख को मजबूती से रखा, श्री मिश्र ने कहा, ''न तो हमने मजबूती से रखा और न ही अपना रुख बदला।''

इस बीच केंद्रीय वित्त मंत्री प्रणव मुखर्जी ने कहा है कि दोनों देशों के बीच के विवाद सख्त बातचीत से ही सुलझ सकते हैं। भारत और चीन के बीच अभी भी सीमा विवाद से संबंधित कुछ मुद्दे हैं। लेकिन इन मुद्दों को बातचीत के जरिए सुलझा लिया जाएगा।

श्री मुखर्जी ने कहा, ''दोनों देशों के इस विवाद के वास्तविक समाधान ने अभी कोई शक्ल नहीं ली है क्योंकि दोनों देशों के बीच कुछ मतभेद बने हुए हैं। दोनों देशों के बीच व्यापार तेजी से बढ़ रहा है।''

11 नवंबर के दिन नई दिल्ली में भारतीय विदेश राज्य मंत्री शशि थरूर ने चीनी मीडिया की उस रिपोर्ट को 'मूर्खतापूर्ण' बताया जिसमें कहा गया था कि भारत 1962 का सबक भूल गया है। थरूर ने चीन के सरकारी अखबार ग्लोबल टाइम्स की एक रिपोर्ट पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा, ''भारत 1962 से लंबा रास्ता तय कर चुका है। यह कहना कि भारत ने सबक नहीं सीखा है, मूर्खतापूर्ण है।''

चीनी विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता चिन गांग ने कहा कि भारत ने यात्रा रोकने के चीनी अनुरोध की उपेक्षा कर दी। चिन ने मीडिया से कहा, ''भारतीय पक्ष ने दलाई लामा को विवादास्पद क्षेत्र में जाने की इजाजत देकर चीन की औपचारिक स्थिति की अनदेखी की है।'' कुल मिलाकर इस यात्रा ने अरुणाचल पर भारत की नीति को स्पष्ट किया।

भारत की तिब्बत नीति बदलने का यह एक दैवीय अवसर है

अरुणाचल पर चीन सरकार के व्यवहार की असलियत खुलने पर भारत को अब जागना चाहिए

—विजय क्रान्ति

इधर पिछले कई दिनों से भारत–चीन संबंधों में खटास का नया दौर शुरू हो गया है। चीन सरकार ने एक के बाद एक ऐसे कई गोले नई दिल्ली पर दागे हैं जिन्होंने भारत सरकार को विचलित कर दिया है। चीन सरकार को विदेश नीतियां बनाने की सलाह और दिशा निर्देश देने वाले एक सरकारी थिंक टैक ने कुछ महीने पहले अपने एक विशेषज्ञ के छद्म नाम से एक विश्लेषण प्रकाशित किया जिसमें कहा गया था कि भारत एक झूठमूठ का देश है जो जातियों और धर्मों के घालमेल से बना हुआ है और टूटने के कगार पर है। लिहाजा चीन सरकार को नियोजित तरीके से प्रयास करके और वहां के तमिलों, असमियों, कश्मीरियों आदि आदि को सीधा सहयोग देकर भारत के कम से कम बीस टुकड़े कर देने चाहिएं। चीन सरकार ने इसे 'एक विद्वान की व्यक्तिगत राय' कहकर दिल्ली को शांत करने की कोशिश की लेकिन साथ–साथ इस लेख को कई सरकारी प्रकाशनों में छाप भी डाला।

अरुणाचल प्रदेश पर अपना दावा जताते हुए चीन सरकार पहले भी कई बार चीन यात्रा पर जाने वाले अरुणाचली सांसदों और अधिकारियों को इस आधार पर चीनी वीज़ा देने से मना करती आयी है कि वे 'चीनी नागरिक' होने के नाते बिना वीज़ा वहां आ सकते हैं। लेकिन पिछले दिनों उसने तब हद कर दी जब एशिया विकास बैंक से उधार लेने की भारत की एक अर्जी को चीन सरकार ने यह कहकर रद्द करवा दिया कि अरुणाचल प्रदेश एक विवादास्पद इलाका है और क्योंकि इस आवेदन में अरुणाचल प्रदेश की विकास परियोजनाओं की राशि भी शामिल है इसलिए यह ऋण नहीं दिया जाना चाहिए।

पिछले एक दो साल से चीन के सरकारी प्रकाशनों में अरुणाचल प्रदेश के लिए 'दक्षिणी तिब्बत' का इस्तेमाल किया जाने लगा है। ऐसे लेख कई बार छप चुके हैं जिनमें चीन सरकार से सवाल किया जाता है कि वह 'दक्षिणी तिब्बत' को भारत से कब 'मुक्त' कराएगी। इस बारे में चीन की दलील है कि क्योंकि तिब्बत चीन का हिस्सा है और अरुणाचल के एक बड़े हिस्से की भी यही संस्कृति है इसलिए अरुणाचल भी

एक चीनी थिंक टैंक के अनुसार, ''भारत एक झूठमूठ का देश है जो जातियों और धर्मों के घालमेल से बना हुआ है और टूटने के कगार पर है। लिहाजा चीन सरकार को नियोजित तरीके से प्रयास करके और वहां के तमिलों, असमियों, कश्मीरियों आदि आदि को सीधा सहयोग देकर भारत के कम से कम बीस टुकड़े कर देने चाहिएं।'' चीन सरकार ने इस लेख को कई सरकारी प्रकाशनों में छाप भी डाला।

चीन का है। उसका कहना है कि तिब्बत से जुड़े अरुणाचल के तावांग इलाके में छठे दलाई लामा सेयांग ग्यात्सो पैदा हुए थे। चीन यह भी कहता है कि 1914 के शिमला समझौते के तहत यह इलाका भारत में शामिल किए जाने से पहले तक वहां से तिब्बत को टैक्स जाता था इसलिए यह तिब्बत का हिस्सा है। कुल मिलाकर चीन इस इलाके में भारत के 90 हजार वर्ग किमी इलाके पर दावा जता रहा है।

कुछ समय पहले भारतीय राष्ट्रपति की अरुणाचल यात्रा पर चीन ने भारी आपत्ति खड़ी की थी। अब इस राज्य में चुनाव प्रचार के दौरान प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह की यात्रा पर चीन ने जैसा बावेला खड़ा किया और चीन के सरकारी प्रवक्ता ने भारतीय प्रधानमंत्री के लिए जिस तरह की अभद्र भाषा का इस्तेमाल किया उसने केवल भारत ही नहीं बल्कि अंतर्राष्ट्रीय कूटनीतिक बिरादरी को भी हैरान किया। अरुणाचल को 'तथाकथित अरुणाचल प्रदेश' कहते हुए उसने डा. मनमोहन सिंह का नाम लेकर उनकी अरुणाचल चुनाव यात्रा को 'उकसाने वाली कार्रवाई' बताया और भारत को चेतावनी दे डाली कि इस 'विवादास्पद' कदम के परिणाम अच्छे नहीं होंगे। उसने डा. मनमोहन सिंह को यह सलाह तक दे डाली कि उन्हें चीन की चिंताओं का भी ध्यान रखना चाहिए।

इससे पहले चीन सरकार अपने नक्शों में अरुणाचल को चीनी हिस्सा दिखाती रही है और प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी को दिए गए आश्वासनों के बावजूद सिक्किम को एक अलग देश के रूप में दिखाती आ रही है। लेकिन पिछले दिनों बीजिंग में उसने एक ऐसा नक्शा विदेशी पत्रकारों में बांटा जिसमें जम्मू कश्मीर को एक अलग देश दिखाया गया है। केवल इतना ही नहीं, उसने अब एक नई कूटनीतिक परंपरा शुरू कर दी है जिसके तहत जम्मू कश्मीर से चीन की यात्रा पर जाने वाले भारतीय नागरिकों को उनके भारतीय पासपोर्ट के बजाए एक अलग कागज़ पर वीज़ा जारी किया जाता है। इसका सीधा अर्थ है कि चीन सरकार जम्मू कश्मीर को भारत का हिस्सा नहीं मानती।

और अब तिब्बत के निर्वासित शासक दलाई लामा की प्रस्तावित अरुणाचल यात्रा को लेकर तो चीन का भारत विरोधी बुखार सिरसाम के स्तर तक जा पहुंचा है जिसमें रोगी मानसिक संतुलन खोकर अनाप–शनाप बोलने की हालत मे चला जाता है। दलाई लामा इससे पहले भी कई बार अरुणाचल जा चुके हैं। बल्कि तिब्बत पर चीनी कब्जे के अंतिम चरण में 1959 में चीनी सैनिकों से अपनी जान बचाने और भारत में शरण लेने के लिए भागते समय उन्होंने इसी इलाके से भारत में प्रवेश किया था। पहले की तरह इस बार भी उनकी यात्रा का उद्देश्य वहां के प्रतिष्ठित तावांग मठ में धार्मिक प्रवचन देना था।

भारत सरकार द्वारा दलाई लामा को अरुणाचल यात्रा की अनुमति देने पर आग बबूला चीन सरकार ने न केवल दलाई लामा को चीन के खिलाफ एक 'विध्वंसकारी' बताया बल्कि उसने भारत को चीन के 'भीतरी मामलों में दखल देने से बाज आने' की घुड़की भी दे डाली। लेकिन इस बार भारत सरकार ने अभूतपूर्व साहस और राष्ट्रीय आत्मसम्मान का प्रदर्शन करते हुए और बिना चीन की तरह आपा खोए चीन सरकार के इस विरोध को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि ''अरुणाचल प्रदेश भारत का अभिन्न अंग है। दलाई लामा भारत के सम्मानित मेहमान हैं। इसलिए उन्हें भारत में कहीं भी आने जाने की आजादी है।''

पिछले 60 साल के भारत–चीन संबंधों में शायद यह पहला अवसर है जब भारत सरकार ने बिना अपना परंपरागत दब्बूपन दिखाए चीनी घुड़कियों का ऐसा आत्म सम्मान भरा जवाब दिया है। इस मामले में चीन दलाई लामा से भी खासा नाराज है और उन्हें 'गद्दार' मानता है। अरुणाचल विवाद पर दो साल पहले दलाई लामा सार्वजनिक रूप से यह कह चुके हैं कि मेरे पूर्ववर्ती 13वें दलाई लामा ने भारत के साथ शिमला संधि करके इस इलाके को भारत का हिस्सा माना था। इसलिए मेरी यह नैतिक और कूटनीतिक जिम्मेदारी है कि मैं अपने से पहले राष्ट्राध्यक्ष और अपने पूर्ववर्ती के निर्णय का सम्मान करूं।

अरुणाचल प्रदेश के विवाद पर भारत सरकार ने जो रवैया अपनाया है वह किसी भी आत्मसम्मानी भारतीय के लिए गर्व और संतोष की बात है। भारत सरकार की वर्तमान नीति को देखते हुए इस बात पर विश्वास बढ़ रहा है कि भारतीय नीतिकारों की नई पीढ़ी पिछली पीढ़ी के मुकाबले कहीं अधिक साहसी और आत्मसम्मानी है और वह चीनी घुड़कियों का सही जवाब देने के लिस तैयार है। लेकिन भारतीय नीतिकारों के ढुलमुल भरे पुराने इतिहास को देखते हुए कुछ निराशावादी लोगों को अभी भी आशंका है कि आने वाले दिनों में चीन की बढ़ती तिलमिलाहट और उसके आक्रामक रुख के सामने भारत सरकार अपना यह आत्मसम्मानी रवैया बनाए रख पाएगी या नहीं।

लेकिन इस तरह की आशंकाओं के बावजूद अब यह तो स्पष्ट हो चुका है कि भारत की कूटनीति में, खासतौर से चीन के साथ संबंधों के मामले में भारत में एक नई सोच उभर रही है। अब चीन के साथ इस

इस बार भारत सरकार ने अभूतपूर्व साहस और राष्ट्रीय आत्मसम्मान का प्रदर्शन करते हुए और बिना चीन की तरह आपा खोए चीन सरकार के इस विरोध को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि ''अरुणाचल प्रदेश भारत का अभिन्न अंग है। दलाई लामा भारत के सम्मानित मेहमान हैं। इसलिए उन्हें भारत में कहीं भी आने जाने की आजादी है।'' पिछले 60 साल में शायद यह पहला अवसर है जब भारत सरकार ने चीनी घुड़कियों का ऐसा आत्म सम्मान भरा जवाब दिया है।

विवाद में भारतीय पक्ष सीधे–सीधे और दो टूक सवाल उठा सकता है कि 1949 में चीनी गणराज्य के अस्तित्व में आने से पहले तिब्बत एक स्वतंत्रत देश था –– कम से कम 1913 के बाद से तो था ही; कि पिछले 2000 साल से ज्यादा लंबे इतिहास के दौरान अरुणाचल समेत 3500 किमी लंबी भारत–तिब्बत सीमा पर किसी एक दिन के लिए, एक इंच जगह पर भी न तो कोई चीनी सैनिक तैनात था और न टैक्स उगाहने वाला कोई चीनी कारिंदा; कि इस सीमा पर न तो चीन की करेंसी या चीनी डाक का चलन था और न किसी तरह का कोई चीनी कानून यहां लागू था; कि 1914 की शिमला संधि में भारत,तिब्बत और चीन तीन अलग–अलग देशों के तौर पर शामिल हुए थे; कि इस संधि में तत्कालीन तिब्बत सरकार ने अरुणाचल (तब 'नेफा') को भारत का हिस्सा स्वीकार किया था और चीन ने इस पर कोई आपत्ति दर्ज नहीं करायी थी; कि यहां की किसी भी जाति की चीनी जाति से किसी तरह की समानता नहीं है (अरुणाचल की कई जातियों में से एक मोन्पा जनजाति के लोग सीमा के दोनों ओर रहते हैं जिस कारण उनकी संस्कृति समान है। लेकिन बेचारे तिब्बती मोन्पाओं का चीन से रिश्ता उपनिवेशवादी गुलामी से ज्यादा कुछ नहीं है) और; यह भी कि चीन ने 1962 युद्ध में तावांग पर कब्जा करने के बाद भी इसे 'भारतीय' इलाका मानकर खाली कर दिया था।

असल में अरुणाचल को लेकर चीन के ताजा रवैये को भारत सरकार को एक दैवीय अवसर की तरह इस्तेमाल करना चाहिए। 1950 में तिब्बत पर चीनी हमले और 1951 में कब्जे की ओर भारत सरकार ने न केवल अपनी आंखें बंद रखने की नीति अपनायी थी बल्कि उसने अंतर्राष्ट्रीय बिरादरी को भी इसमें दखल देने से रोक दिया था। बाद के वर्षों में भी भारत सरकार ने चीन को तिब्बत पर अपने नाजायज़ कब्जे का पक्का करने का भरपूर अवसर देने का काम किया। इतने बड़े पाप का प्रायश्चित तो आखिर किसी दिन भारत को करना ही होगा।

संयोग से अब अपनी बेजा करतूतों से चीन ने भारत सरकार को समुचित कारण दे दिया है कि वह अपनी तिब्बत नीति पर नए सिरे से विचार करे। दब्बूपने में तिब्बत को चीन का हिस्सा मान लेने के बजाए अब भारत को तिब्बत पर चीन के अनैतिक और गैरकानूनी कब्जे को चुनौती देकर इसे अंतर्राष्ट्रीय मंच पर एक उपनिवेशवादी मुद्दे के रूप में पेश करना चाहिए। भारत के खिलाफ चीन के आक्रामक रवैये की यही सटीक काट हो सकती है।

चीन ब्रह्मपुत्र पर बांध बना रहा है

भारतीय उपग्रह ने चीनी झूठ को पकड़ा

6 नवंबर भारत के दूरसंवेदी उपग्रह ने चीन सरकार के इस झूठ को पकड़ लिया है कि उसकी योजना यार्लुंग त्सांगपो पर बांध बनाने या उसे मोड़ने की नहीं है। तिब्बत की यह नदी भारत में ब्रह्मपुत्र के नाम से बहती है। भारत की राष्ट्रीय दूरसंवेदी एजेंसी ने 3 नवंबर को इस बात की पुष्टि की कि तिब्बत में झांगमू साइट पर निर्माण कार्य चल रहा है। इंडियन एक्सप्रेस ऑनलाइन पर 4 नवंबर को छपी खबर के मुताबिक, भारत सरकार ने इस मामले को विदेश मंत्रालय के जरिए चीन के साथ 'राजनैतिक स्तर' पर उठाया है।

राष्ट्रीय दूरसंवेदी एजेंसी ने ब्रह्मपुत्र के जल प्रवाह को मोड़ने की चीन की संभावित योजना के आकलन के लिए बनी सचिवों की समिति के सामने सबूत पेश किए। सबूत में साइट के 3–4 किमी के इर्दगिर्द घर, निर्माणखुदाई और ट्रकों का आवागमन दिखाया गया था। साइट पर संभवतः जल भंडारण के लिए निर्माण चल रहा है।

रिपोर्ट के मुताबिक, झांगमू पनबिजली परियोजना का उद्घाटन इस साल 16 मार्च को हुआ और यहां पहला कंक्रीट 2 अप्रैल को डाला गया। 1.14 अरब युआन यानी लगभग 8 अरब रुपए की लागत वाली इस परियोजना का काम पांच कंपनियों के कॅन्सोर्टियम चाइना गेजौबा ग्रुप को सौंपा गया है।

एजेंसी के सबूतों से नई दिल्ली की यह आशंका बढ़ गई है कि भारत और बांगलादेश जैसे नीचे के नदीतटीय देश सूखे के दौरान पानी के लिए और बारिश के मौसम में बाढ़ से रक्षा के लिए चीन की दया पर निर्भर रहेंगे।

रिपोर्ट में कहा गया है कि ब्रह्मपुत्र नदी की घाटी भारत के कुल जल संसाधन का लगभग 30 प्रतिशत और उसकी कुल पनबिजली क्षमता का लगभग 40 प्रतिशत मुहैया कराती है।

चीन के जल संसाधन मंत्री वांग शुचेंग ने इस परियोजना को नकारते हुए कहा था कि यर्लुंग त्सांगपो बांध का प्रस्ताव ''अनावश्यक, अव्यावहारिक और अवैज्ञानिक'' है जिसमें सरकार किसी भी तरह शामिल नहीं है। अब नदी के बहाव को मोड़कर चीन इसके पानी को गोबी रेगिस्तान और गांसू ले जाएगा और मृतप्राय पीली नदी भी पुनः भर जाएगी। पीली नदी साल के ज्यादातर महीनों में सूखी रहती है।

रिपोर्ट में कहा गया है कि ब्रह्मपुत्र नदी की घाटी भारत के कुल जल संसाधन का लगभग 30 प्रतिशत और उसकी कुल पनबिजली क्षमता का लगभग 40 प्रतिशत मुहैया कराती है। कुछ साल पहले चीन के जल संसाधन मंत्री वांग शुचेंग ने इस परियोजना को नकारते हुए कहा था कि यर्लुंग त्सांगपो बांध का प्रस्ताव ''अनावश्यक, अव्यावहारिक और अवैज्ञानिक'' है जिसमें सरकार किसी भी तरह शामिल नहीं है।

शिंजियांग में 9 लोगों को मृत्युदंड

पूर्वी तुर्किस्तान में 800 उइगुरों की हत्या के बाद भी किसी चीनी सैनिक या नागरिक पर कार्रवाई नहीं

बीजिंग, 10 नवंबर चीन की एक सरकारी संवाद एजेंसी की खबर के अनुसार चीन के उपनिवेश शिनजियांग (पूर्वी तुर्किस्तान) में 'जातीय दंगों' में भाग लेने के कारण 9 लोगों को मौत की सजा दी गई है। ये जातीय दंगे चीन के इस पश्चिमी प्रांत की राजधानी उरुमची और दो अन्य प्रमुख नगरों काशगर तथा काशी में पिछले साल जुलाई में भड़के थे। चीन सरकार ने इन दंगों में मरने वालों की संख्या 197 बताई थी और दावा किया था कि मरने वाले ज्यादातर चीनी हान लोग थे।

सरकार के अनुसार मरने वाले ज्यादातर हान चीनी थे जिन्हें गुआंगदोंग के हत्याकांड से नाराज स्थानीय उइगुरों ने मार डाला था। लेकिर उइगुर संगठनों का आरोप है कि पहले दिन के उइगुर प्रदर्शनों के बाद चीनी सेना और पुलिस ने वहां लाकर बसाए गए हान चीनियों की मदद से कम से कम 800 उइगुर नागरिकों की हत्या कर दी थी।

लेकिन चाइना न्यूज सर्विस ने अपनी रिपोर्ट में मौत की सजा के बारे में और अधिक ब्यौरा नहीं दिया। रिपोर्ट के मुताबिक, सुप्रीम पीपुल्स कोर्ट ने सभी मामलों की समीक्षा की थी। जिसके बाद मृत्यु दंड दे दिया गया। चीन में मृत्यु दंड के मामलों में ऐसी समीक्षा अनिवार्य है। रिपोर्ट में यह नहीं बताया गया कि मृत्युदंड कब दिया गया।

जिन लोगों को मृत्युदंड दिया गया उनकी जातीयता के बारे में आदेश अस्पष्ट है। रिपोर्ट में उन्हें केवल 'अपराधी' कहा गया है। लेकिन शिंजियांग में 5 जुलाई को भड़के दंगों के लिए मुख्य रूप से उइगुर जिम्मेदार थे। उइगुर तुर्की मुसलमान हैं जो सुन्नी इस्लाम को मानते हैं। वे शिंजियांग में सबसे बड़ा जातीय समूह हैं। चीन ने 1949 में पूर्वी तुर्किस्तान पर कब्जा करके उसे शिंजियांग नाम दे दिया था। पिछले कई दशकों से वहां चीन से लाए गए हान चीनियों को भारी संख्या में बसाकर वहां के जातीय समीकरण का चीनी करण किया जा रहा है जिसका उइगुर राजनीतिक और हिंसक तरीके से विरोध करते आए हैं।

पिछले साल जुलाई के दंगों के पीछे असली कारण चीन के गुआंगदोंग (कैंटन) शहर में चीनी मजदूरों द्वारा 25 मई के दिन 18 उइगुर युवा मजदूरों की हत्या वाली घटना थी। शिंजियांग से गुआंगदोंग में कम मजदूरी पर लाए गए इन उइगुर युवाओं की गलियों में इस कारण सरेआम हत्या कर दी गई थी कि विश्व मंदी के कारण गुआंगदोंग में पहले से हजारी चीनी मजदूरों की नौकरियां छिन चुकी थीं। चीन सरकार का कहना है कि 5 जुलाई के दंगों में 197 लोग मारे गए और 1,600 घायल हो गए। सरकार के अनुसार मरने वाले ज्यादातर हान चीनी थे जिन्हें गुआंगदोंग के हत्याकांड से नाराज स्थानीय उइगुरों ने मार डाला था। लेकिर उइगुर संगठनों का आरोप है कि पहले दिन के उइगुर प्रदर्शनों के बाद चीनी सेना और पुलिस ने वहां लाकर बसाए गए हान चीनियों की मदद से कम से कम 800 उइगुर नागरिकों की हत्या कर दी थी। *(अधिक विवरण के लिए 'तिब्बत देश' का जुलाई–2009 अंक देखें। इस अंक में हमने विदेशी पत्रकारों द्वारा खींचे और प्रकाशित किए गए ऐसे दो चित्र भी प्रकाशित किए थे जिनमें चीनी पुलिसकर्मियों और हान चीनी दंगाई के हाथो में एक ही स्टॉक से लिए गए और एकदम एक जैसे डंडे देखे जा सकते हैं। – संपादक)*

शिंजियांग में खूनी झड़पों का इतिहास पुराना है। लेकिन कभी इतने बड़े पैमाने पर उइगुरों की हत्याएं नहीं की गईं। इस हत्याकांड से शिंजियांग में उइगुरों के प्रति चीन की नीतियों के बारे में सवाल खड़े हो गए। चीन सरकार ने हिंसा के लिए निर्वासन में रहने वाली उइगुर नेता राबिया कदीर को दोषी ठहराया। वाशिंगटन के एक उपनगर में निर्वासन में रहने वाली कदीर ने बाद में इन आरोपों का जोरदार खंडन किया था।

अक्तूबर में अधिकारियों ने घोषणा की थी कि अलग–अलग मुकदमों में दोषी पाए गए 12 व्यक्तियों को मौत की सजा दी गई है। इनमें से तीन व्यक्तियों की सजा दो साल के लिए रोक दी गई। सभी 12 दोषियों में एक को छोड़कर बाकी सभी परंपरागत उइगुर नाम हैं।

उरुमची की एक अपीलीय अदालत ने 30 अक्तूबर को घोषणा की कि इसने नौ लोगों के आसन्न मृत्यु दंड और 12 अन्य के कारावास की सजा बहाल रखी है। सरकार ने कहा था कि सुप्रीम पीपुल्स कोर्ट मृत्यु दंड की समीक्षा करेगा।

चाइना न्यूज सर्विस की रिपोर्ट के मुताबिक, शिंजियांग दंगों से संबंधित एक अन्य मामले में 20 लोगों को सजा सुनाई गई है। दंगे की इस घटना में 18 लोग मारे गए थे, तीन अन्य घायल हुए थे और लगभग 4 लाख डॉलर मूल्य की संपत्ति नष्ट हुई थी।

3 नवंबर को शिंजियांग के एक अखबार ने खबर छापी थी कि स्थानीय अधिकारियों ने दंगाइयों और अन्य तथाकथित आतंकवादी तत्वों को खत्म करने के लिए एक सख्त अभियान चलाया है।

शिंजियांग इस तरह के कई अभियानों से पहले भी गुजर चुका है। ये अभियान शिंजियांग में कम्युनिस्ट पार्टी के शीर्ष अधिकारी और पोलितब्यूरो के सदस्य वांग लेचुआन के नेतृत्व में चलाए गए थे। वांग जातीय अल्पसंख्यक नीति के कट्टर समर्थक माने जाते हैं। वे शिंजियांग पर 15 साल से अधिक समय तक शासन कर चुके हैं। किसी क्षेत्र या प्रांत के

मुखिया के लिए यह असामान्य रूप से लंबी अवधि है।

मानवाधिकारों के पैरोकारों ने दंगों के बाद चीन सरकार द्वारा चलाई गई दमन–नीति की आलोचना की है। पिछले अक्तूबर में, ह्यूमन राइट्स वाच ने एक रिपोर्ट जारी की जिसमें कहा गया था कि सुरक्षा बलों द्वारा गिरफ्तार किए जाने के बाद से 43 उइगुर लापता हैं। रिपोर्ट के मुताबिक, लापता उइगरों की संख्या संभवतया अधिक है, लेकिन ह्यूमन राइट्स वाच के जांचकर्ताओं को केवल 43 लोगों के गायब होने के सबूत मिले। ये जांचकर्ता शिंजियांग में गुप्त रूप से काम कर रहे थे। रिपोर्ट में कहा गया, ''लोगों के गायब होने का मामला अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार काननू का गंभीर उल्लंघन है।''

इससे पहले मार्च 2008 में तिब्बत में भी चीन से आजादी पाने के लिए इससे भी ज्यादा व्यापक पर और लंबे समय तक प्रदर्शनों का सिलसिला चला था। तब भी चीन सरकार ने तिब्बत में वैसा ही दमन अभियान चलाया था जो अब शिंजियांग में चलाया जा रहा है।

तिब्बती निर्वासन समूहों ने बताया है कि ल्हासा में 20 अक्तूबर के दिन चार तिब्बतियों को मृत्युदंड दे दिया गया। इन तिब्बतियों पर आरोप था कि उन्होंने चीन सरकार के खिलाफ बगावत में भाग लिया था। वहां भी चीन सरकार ने केवल 19 लोगों के मरने की की खबर दी थी जिनमें से ज्यादातर हान चीनी थे।

अमेरिका ने निष्पक्षता बरतने की अपील की

वाशिंगटन– 11 नवंबर अमेरिका ने चीन से कहा है कि वह उइगुरों के खिलाफ मुकदमों में पारदर्शिता और निष्पक्षता बरते। इसके पहले चीन ने कहा था कि उरुमची में जातीय हिंसा भड़काने के आरोप में उसने नौ लोगों को मृत्युदंड दिया है।

विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता इयान केली ने कहा, ''अमेरिकी सरकार चीन से बार–बार कह रही है कि वह उरुमची हिंसा से संबंधित सभी बंदियों और न्यायिक प्रक्रियाओं में पारदर्शिता दिखाए।''

श्री केली ने आगे कहा, ''हम चीन से यह भी अपील करते हैं कि वह अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुसार अपने सभी नागरिकों के कानूनी अधिकारों का सम्मान करे। हमारे दूतावास के अधिकारियों ने चीन सरकार से इस मुद्दे पर बातचीत की है।''

यहां गौरतलब है कि उरुमची में चीन लाकर लाखों की संख्या में बसाए जा रहे बहुसंख्यक हान समुदाय के खिलाफ स्थानीय मुस्लिम उइगुर समुदाय

उरुम्ची में चीनी प्रवासियों ने 800 उइगुरों की हत्या की – उपनिवेश के प्रतिनिधि

हिंसा पर उतारू हो गया था। चीन के सरकारी आंकड़ों के मुताबिक, इस हिंसा में केवल 197 लोग मारे गए थे और 1,600 से अधिक लोग घायल हुए थे। लेकिन स्थानीय उइगुरों का आरोप है कि सरकारी हिंसा में मारे गए 800 से अधिक उइगुरों की कहीं बात भी नहीं की जा रही।

निर्वासित उइगुर नेता राबिया कदीर ने एक बयान में कहा, ''राष्ट्रपति ओबामा की चीन यात्रा से ठीक पहले लोगों को फांसी पर चढ़ाया जाना यह दर्शाता है कि बीजिंग को अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकारों के मानकों की परवाह नहीं है। चीनी अधिकारियों को उनकी कार्रवाई के हर हाल में जिम्मेदार ठहराया जाना चाहिए, वरना पूर्वी तुर्किस्तान में तनाव और अधिक बढ़ जाएगा।''

कदीर ने आगे कहा, ''मैं अंतरराष्ट्रीय समुदाय से अपील करती हूं कि वे पूर्वी तुर्किस्तान में 5 जुलाई से शुरू हुई उइगुरों की गिरफ्तारी और हत्या की पूरी जांच के लिए चीन पर दबाव डालें।''

वर्ल्ड उइगुर कांग्रेस की मुखिया कदीर ने छह साल का समय एक चीनी जेल में बिताया था। अमेरिकी दबाव में उन्हें 2005 में रिहा कर दिया गया जिसके बाद वे वाशिंगटन चली गईं।

मानवाधिकार संगठनों ने अधिक मुखर न होने पर ओबामा की आलोचना की है। उनका कहना है कि चीन ने अतीत में अमेरिकी राष्ट्रपतियों की बीजिंग यात्रा से पहले असंतुष्टों को रिहा किया है जिसकी मिसाल कदीर हैं। लेकिन इस बार चीन सरकार उनकी यात्रा से पहले उइगुर स्वतंत्रता सेनानियों को मृत्युदंड देकर श्री ओबामा को बता रही है कि उनके बारे में चीन की राय क्या है।

चीन के सरकारी आंकड़ों के मुताबिक, इस हिंसा में केवल 197 लोग मारे गए थे और 1,600 से अधिक लोग घायल हुए थे। लेकिन स्थानीय उइगुरों का आरोप है कि सरकारी हिंसा में मारे गए 800 से अधिक उइगुरों की कहीं बात भी नहीं की जा रही।

(1)

(2)

(10)

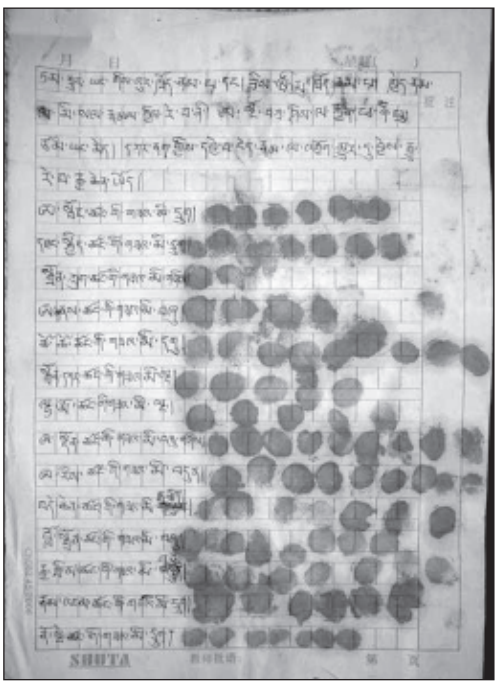

कैमरे की

1. रोम में तिब्बत पर 5वें अंतर्राष्ट्रीय संसदीय सम्मेलन में दलाई लामा की अ
2. चीन के अनहुई प्रांत के चीनी सैनिकों का एक दस्ता तिब्बत में तैनाती से
3. बोधगया में हुए विशेष बौद्ध प्रार्थना समारोह में दुनिया भर से आए 50 हज
4. कोपेनहागेन विश्व पर्यावरण सम्मेलन में तिब्बत को 'तीसरा ध्रुव' मानते हुए
5. तिब्बती 'विभीषण' और 'जयचंद' न्गापो नावांग जिग्मे की मौत (23 दिस.)
6. 10 दिसंबर को राष्ट्रपति ओबामा को नोबेल शांति पुरस्कार मिलने के अव
7. 25 दिसंबर को बीजिंग में चीनी लोकतंत्रवादी नेता लियू शिआबाओ पर मु
8. ताइवान–चीन वार्ताओं के विरोध में ताइवान के ताइचुंग में एक प्रदर्शन में
9. चीनी इशारों पर ढाका, बांगलादेश में तिब्बत संबंधी फोटो प्रदर्शनी पर प्रति
10. तिब्बत के नागचूखा में प्रदर्शनकारी लोगों ने अपने खून से हस्ताक्षर करके

(9)

(8)

♦ आंखों देखी

(3)

(4)

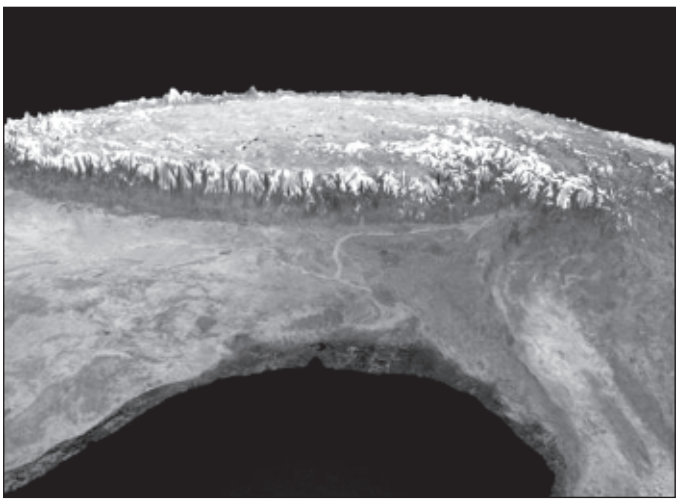

आंख से

आगवानी करते हुए इटली के तिब्बत समर्थक संसदीय दल के नेता मातेओ मेकाची।
पहले अपने शहर में दिए गए विदाई समारोह में।
ार से अधिक श्रद्धालुओं ने भाग लिया और दलाई लामा के प्रवचन सुने।
ए वहां पर्यावरण विनाश पर चिंता व्यक्त की गई।
पर तिब्बती निर्वासन सरकार ने 'ईमानदार देशभक्त' घोषित कर विवाद पैदा किया।
सर पर ओसलो में तिब्बत समर्थकों ने उन्हें तिब्बत को याद रखने की सलाह दी।
कदमे के समय बाहर एक प्रदर्शनकारी को पकड़ते हुए दो चीनी पुलिसकर्मी।
तिब्बत का झंडा जलाते हुए प्रदर्शनकारी।
तिबंध के खिलाफ एक नवंबर को धरने पर बैठे डा. मुजफ्फर अहमद।
के तिब्बती नेता तुलकू तेनज़िन देलेक की रिहाई वाला मांगपत्र पेश किया।

(फोटो परिचय : 1से 10 तक ऊपर बाएं से घड़ी की दिशा में)

(5)

(7)

(6)

फोटो रू अक्षत क्रान्ति

नोबेल विजेता सुश्री जोडी विलियम्स (बाएं) और सुश्री मायरीड मेगुअर – सत्य के साथ

नोबेल महिलाओं का तिब्बत को समर्थन

तीन नोबेल विजेता दलाई लामा से मिलने आईं

दलाई लामा शांति और न्याय की मूरत हैं। आज दुनिया इन मूल्यों को खो रही है। अहिंसा दलाई लामा की ताकत है जिससे सरकारें गिराई जा सकती हैं। इसकी उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए। गांधी ने इसे साबित ी किया था।

पिछले हफ्ते धर्मशाला उस समय सुर्खियों में छा गया जब दुनिया के विभिन्न हिस्सों से तीन महिला नोबेल पुरस्कार विजेता लंबा रास्ता तय कर दलाई लामा को समर्थन देने के लिए हिमाचल प्रदेश आईं। उल्लेखनीय है कि इससे पहले अमेरिका के राष्ट्रपति बराक ओबामा ने बीजिंग के दबाव में आकर पिछले महीने वाशिंगटन में तिब्बती आध्यात्मिक नेता से मिलने से इनकार कर दिया था। अमेरिका की जोडी विलियम्स, बेलफास्ट (उत्तरी आयरलैंड) की मायरीड कोरिगन मेगुअर और ईरान की शिरीन एबदी ने ''दुनिया में अहिंसा, शांति, न्याय और समानता के अभियान को मजबूत बनाने और फैलाने के लिए'' 2006 में नोबेल विमिंस इनिशिएटिव के गठन में सहयोग किया था।

पीस जाम फाउंडेशन द्वारा अपर धर्मशाला स्थित तिब्बती बाल ग्राम में आयोजित एक समारोह में मंच पर दलाई लामा के साथ इन महिलाओं की उपस्थिति नारी शक्ति का परिचायक थी। इन महिलाओं ने दलाई लामा को अन्य नोबेल पुरस्कार विजेताओं के हस्ताक्षरों से युक्त एक बयान भी सौंपा जिसमें अहिंसा, शांति, न्याय और समानता के काम के लिए समर्थन दिया गया था। शिरीन एबदी ने कहा, ''परम पावन, आपका राजनैतिक आचरण समूची दुनिया के लिए आदर्श रहा है। ऐसे समय में जब मानवाधिकारों को भुलाया जा रहा है, आप ने दिखा दिया है कि अहिंसा समर्पण नहीं है। आपकी अहिंसा दिल से शासन करती है, तलवार से नहीं।''

फिर दलाई लामा ने उस स्कूल में युवा तिब्बती छात्रों को संबोधित किया जिसका निर्माण उन्होंने 50 साल पहले पंडित जवाहरलाल नेहरू के साथ किया था। उन्होंने छात्रों से कहा, ''बीसवीं शताब्दी में 20 करोड़ से अधिक लोग लड़ाइयों में मारे गए, लेकिन समस्याएं जस की तस बनी रहीं। हमें वैश्विक पारिस्थितिकी और आर्थिक संकट से निपटने के लिए अन्योन्याश्रय की बौद्ध अवधारणा को अपनाना चाहिए।''

तिब्बत की निर्वासन सरकार द्वारा आयोजित एक प्रेस कॉन्फ्रेंस में मायरीड मेगुअर ने तिब्बत से आए 50 नवागंतुक शरणार्थियों के साथ हुई अपनी भेंट के बारे में बताया। उन्होंने कहा, ''शरणार्थियों ने हमें बताया कि तिब्बत में युवा लोगों को उनके घरों से उठा लिया जाता है, प्रताड़ित किया जाता है और मार दिया जाता है। यही नहीं, लोगों को जिंदा दफना दिया जाता है, जला दिया जाता है, उनके हाथों को बांधकर नदियों में फेंक दिया जाता है। हम मानव परिवार का सदस्य होने के नाते तिब्बत में चीन के इस आचरण का समर्थन नहीं करते। और उन राजनैतिक नेताओं को चुनौती देते हैं जो न्याय की तुलना में मुनाफे को अधिक तरजीह देते हैं।''

नोबेल पुरस्कार विजेता महिलाओं ने अपनी नई वेबसाइट डब्लूडब्लूडब्लू.थैंकयूतिबेत.ओआरजी शुरू करने की भी घोषणा की। सुश्री मेगुअर ने कहा कि ''हमारी बहन आंग सांग सू ची नौ महिला नोबेल पुरस्कार विजेताओं में एकमात्र महिला हैं जो जेल में बंद हैं। सू ची की नजरबंदी के पीछे चीन का हाथ है। चीन बर्मा के फौजी शासकों का समर्थन करता है। हमें सच बोलने से ताकत मिलती है। सचाई को सामने लाने के लिए हम मीडिया पर आश्रित हैं।''

चीन सरकार पिछले छह दशकों से उन तस्वीरों, साक्ष्यों और प्रत्यदशयों को दबाती आ रही है जो तिब्बती जनता की उत्पीड़न की कहानी कहते हैं। चीन सरकार उन्हें अंतरराष्ट्रीय मीडिया तक नहीं पहुंचने देती। लेकिन इस डिजिटल युग में कोई क्रूर और सक्षम पुलिस राज्य भी सूचना के हाईवे से निकलने वाले सभी रास्तों को बंद नहीं कर सकती। इसलिए चीन सरकार को अपने इस झूठ को छिपाने में मुश्किल हो रही है कि ''तिब्बती जनता चेयरमैन माओ को अपने पिता की तरह प्यार करती है।''

मैकलोडगंज के तमाम कैफे में आपको ऐसे कई यात्री मिल जाएंगे जो तिब्बत में पर्यटन पर ताजा प्रतिबंध लगने से ठीक पहले वहां जाने में सफल रहे। इन यात्रियों का कहना है कि ल्हासा की हर छत पर हथियारबंद चीनी तैनात हैं, हथियारबंद पुलिसकर्मी

पवित्र जोखांग मठ के चारों ओर मार्च करते हैं, दलाई लामा की सार्वजनिक रूप से भर्त्सना की जाती है और जागरूक तिब्बती लोग अपने कपाल पर पिस्तौलों का खतरा उठाकर सड़कों पर प्रदर्शन करते हैं। इस हफ्ते, नोरबुलिंका इंस्टीट्यूट में दलाई लामा ने उन चार युवा तिब्बतियों के लिए एक सार्वजनिक प्रार्थना का नेतृत्व किया जिन्हें पिछले हफ्ते ल्हासा में फांसी पर चढ़ा दिया गया। इन युवकों पर चीन राज्य के खिलाफ बगावत करने का आरोप था।

चेयरमैन माओ का साम्राज्य वैश्विक प्रभुत्व के लिए कोशिश कर रहा है, लेकिन तिब्बत संकट के कारण राज्य के भीतर की गहरी दरारें उभरकर सामने आने लगी हैं। जातीय पहचान, बौद्ध धर्म, फालुन गोंग और सामुदायिक संगठनों से ताकतवर जन चीनी गणराज्य इतना भयभीत है कि कम्युनिस्ट नेतृत्व के भीतर का विभ्रम उभरकर सामने आने लगा है। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी अपने फौलादी हाथों से भय पैदा तो करती है, लेकिन लोगों की निष्ठा नहीं जीत पाती। सोवियत संघ में भी ऐसा हुआ था जिसकी परिणति उसके ढहने के रूप में सामने आई। लेकिन सोवियत संघ के विपरीत, चीनी गणराज्य के अमेरिका और पश्चिमी शक्तियों से बहुत अच्छे रिश्ते हैं।

एक तिब्बती ऐक्टिविस्ट ने टिप्पणी की, ''चीन में सुधार और परिवर्तन की ताकतें मौजूद हैं, लेकिन पश्चिमी सरकारें कम्युनिस्ट पार्टी को सहारा दे रही हैं और दुनिया की सबसे बड़ी तानाशाही में राजनैतिक सुधार नहीं होने दे रही हैं। हमें आशंका है कि उन्होंने लोकतंत्र को अलविदा कह दिया है और वे 'समरथ को नहिं दोस गुंसाई' के फॉर्मूले पर चल रहे हैं।''

तिब्बती शरणार्थियों के पास न तो धन है और न ही हथियार। लेकिन नोबेल विमेंस इनिशिएटिव जैसे संगठनों का समर्थन उस शक्ति और ईमानदारी को दर्शाता है जिसके कारण तिब्बती संघर्ष दुनिया के नागरिकों के लिए महत्वपूर्ण बन गया है। जोडी विलियम्स ने, जिन्हें बारूदी सुरंग पर काम करने के लिए 1997 में नोबेल शांति पुरस्कार मिला था, अपने विदाई भाषण में कहा, ''धर्मशाला में दलाई लामा से मिलना हमारे लिए महान सम्मान है। दुनिया को उनके नेतृत्व की जरूरत है। वे शांति और न्याय की मूरत हैं। आज दुनिया इन मूल्यों को खो रही है। अहिंसा दलाई लामा की ताकत है जिससे सरकारें गिराई जा सकती हैं। इसकी उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए। गांधी ने इसे साबित भी किया था।''

माउरा मोइनीहन,

साभार : एशियन एज, 4 नवंबर 2009

फ्रैंकफुर्त अंतरराष्ट्रीय पुस्तक मेले में तिब्बत–पू.तुर्किस्तान का मिलन

चीनी उपनिवेशवाद के पीड़ित दो देशों की लेखिकाओं की मुलाकात

30 अक्टूबर 2009 दो महिला आंदोलनकारियों का एक अनोखा चित्र फ्रैंकफुर्त अंतरराष्ट्रीय पुस्तक मेले के दौरान लिया गया था। यह एक संयोग भर था। इन दो महिला आंदोलनकारियों में से एक तिब्बत से और दूसरी शिनजियांग (पूर्वी तुर्किस्तान) से आयी थी। उनकी पहली मुलाकात 'सताये जा रहे लेखकों की चीन में बोलने की आजादी की मांग' मुद्दे पर आयोजित समूह चर्चा के बाद अकस्मात हो गई थी।

राबिया कदीर उइगुर आजादी आंदोलन की विश्व प्रसिद्ध नेत्री हैं जबकि डालहा अगित्सांग जर्मनी में रह रही तिब्बती आंदोलनकारी हैं। एक ही चीनी शासन से उत्पीड़ित दोनों महिलाओं ने मुलाकात होने पर एक. दूसरे को बांह में भर लिया। हेसेन के सरकारी संचार तंत्र द्वारा खींचे गए इस चित्र को पुस्तक मेले की फोटो गैलरी में प्रकाशित होने का सम्मान मिला।

इसी पुस्तक मेले के दौरान एक संवाददाता सम्मेलन में श्रीमती डालहा अगित्सांग ने सेरिंग वोज़ेर की पुस्तक का जर्मन अनुवाद प्रस्तुत किया। इस पुस्तक में 10 मार्च 2008 से लेकर बीजिंग ओलम्पिक के आयोजन के समय तक तिब्बत में हुई घटनाओं का ब्यौरा पेश किया गया है। पुस्तक का नाम है 'तुम्हारे पास बंदूकें हैं, मेरे पास कलम' जिसका प्रकाशन जर्मनी के तिब्बती सहायता समूह टिबेट इनीशिएटिव डॉयट्शलैंड के लूंगटा पब्लिशर्स ने किया था।

वोएजर बीजिंग में आत्म.निर्वासित तिब्बती लेखिका हैं। जब मार्च 2008 में तिब्बत में व्यापक चीन.विरोधी आंदोलन शुरू हुआ उन्होंने हर दिन उन घटनाओं का विवरण अपने ब्लॉग पर पेश किया था। इस प्रेस कॉन्फरेंस में काफी संख्या में लोग मौजूद थे और संचार माध्यमों में इसकी काफी सराहना हुई थी। मेले के पूछताछ स्टाल पर भी काफी लोगों ने इस पुस्तक के बारे में उत्सुकता दिखाई थी।

श्रीमती डालहा (पूरा नाम डोल्मा ल्हामो) का जन्म तिब्बत के खम प्रांत में गोंजो में हुआ था। सन् 1963 में वह जर्मनी आ गई थीं। बर्लिन में एफयू विश्वविद्यालय से शिक्षा प्राप्त करने के बाद वह केंद्रीय एशिया की परम्परागत घुमंतू जनजातियों से जुड़े विषयों की तिब्बतशास्त्री हैं।

फायुल में फुंत्सोक त्सेरिंग की रिपोर्ट

पुस्तक मेले में श्रीमती डालहा अगित्सांग ने सेरिंग वोज़ेर की पुस्तक का जर्मन अनुवाद प्रस्तुत किया। इस पुस्तक में 10 मार्च 2008 से लेकर बीजिंग ओलम्पिक के आयोजन के समय तक तिब्बत में हुई घटनाओं का ब्यौरा पेश किया गया है। पुस्तक का नाम है 'तुम्हारे पास बंदूकें हैं, मेरे पास कलम' जिसका प्रकाशन जर्मनी के तिब्बती सहायता समूह टिबेट इनीशिएटिव डॉयट्शलैंड के लूंगटा पब्लिशर्स ने किया था।

ओबामा मनमोहन सिंह से कुछ सीखें

भारत ने दिखा दिया कि दुनिया चीन से किस तरह निपट सकती है

(वाल स्ट्रीट जर्नल, 30 अक्तूबर 2009 की टिप्पणी)

आज जब राष्ट्रपति ओबामा अगले महीने बीजिंग जाने की तैयारी कर रहे हैं, उनके लिए नई दिल्ली से सबक लेना बेहतर होगा। भारत ने दुनिया को दिखा दिया है कि चीन के साथ कड़ाई से कैसे पेश आना चाहिए। प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह बाकी दुनिया को यह दिखा रहे हैं कि चीन जब धौंसबाजी के मूड में हो तो उससे कैसे निपटा जाए।

भारत ने दुनिया को दिखा दिया है कि चीन के साथ कड़ाई से कैसे पेश आना चाहिए। मनमोहन सिंह बाकी दुनिया को यह दिखा रहे हैं कि चीन जब धौंसबाजी के मूड में हो तो उससे कैसे निपटा जाए। एक क्षेत्रीय शिखर वार्ता के दौरान प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने चीन के प्रधानमंत्री वेन जिआबाओ से स्पष्ट कहा कि ''दलाई लामा हमारे सम्मानीय अतिथि हैं; वे धार्मिक नेता हैं। वे भारत में कहीं भी आने–जाने के लिए स्वतंत्र हैं।

मुद्दा दलाई लामा की अगले महीने की प्रस्तावित अरुणाचल प्रदेश यात्रा है जहां वे तिब्बती बौद्ध अनुयायियों से मिलेंगे। हालांकि अरुणाचल प्रदेश पर भारत का शासन है, लेकिन 1962 की लड़ाई के बाद से चीन उस पर दावा कर रहा है। चीन के प्रवक्ता मा झाओसू ने पिछले हफ्ते कहा कि इस यात्रा से ''दलाई लामा मंडली की चीन–विरोधी और अलगाववादी प्रकृति एक बार फिर उजागर हो गई है।''

लेकिन दलाई लामा के मामले में भारत अटल रहा। सप्ताहांत में एक क्षेत्रीय शिखर वार्ता के दौरान प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने चीन के प्रधानमंत्री वेन जिआबाओ से स्पष्ट कहा कि ''दलाई लामा हमारे सम्मानीय अतिथि हैं; वे धार्मिक नेता हैं।'' मनमोहन सिंह ने यह भी कहा कि जब तक दलाई लामा राजनीति में सक्रिय नहीं हैं, वे भारत में कहीं भी आने–जाने के लिए स्वतंत्र हैं।

दूसरी तरफ, चीन के दबाव में श्री ओबामा ने इस महीने के शुरू में दलाई लामा से न मिलने का फैसला किया है। इससे दलाई लामा विरोधी अभियान चलाने के लिए चीन का साहस बढ़ जाएगा। खासकर भारत में, जहां पिछले 50 वर्षों से भी अधिक समय से तिब्बत की निर्वासन चल रही है।

चीन और भारत के बीच 2,200 मील लंबी सीमा को लेकर अभी भी विवाद चल रहा है। भारतीय क्षेत्र में चीनी अतिक्रमण बढ़ रहा है। कश्मीर और नेपाल को लेकर दोनों देशों के बीच विवाद है।

इन तमाम विवादों के कारण श्री सिंह का उन सिद्धांतों पर अटल रहना लाजिमी है जिनका भारत समर्थन करता है। ये सिद्धांत लोकतंत्र और आजादी के हैं जिनका कि अमेरिका भी पैरोकार है। इसलिए, श्री ओबामा को अपनी चीन संबंधी कूटनीति के लिए भारत से सबक लेना चाहिए।

दलाई लामा की पत्रकारों से अपील : 'तिब्बत जाकर जांच कीजिए'

शेराब वोज़ेर, फायुल 31, अक्तूबर से साभार

तोक्यो – 31 अक्तूबर परमपावन दलाई लामा ने अपने जापान प्रवास के दूसरे दिन समाचार माध्यमों के प्रतिनिधियों से बातचीत करते हुए अंतरराष्ट्रीय समुदाय, खास तौर पर पत्रकारों से अपील की कि वे चीन और तिब्बत जाकर स्थिति की सचाई की जांच करें। निर्वासित तिब्बती नेता ने आज सुबह फॉरेन करेस्पोंडेटस क्लब आफ जापान के सदस्यों से वार्तालाप के दौरान कहा कि ''यदि आप पाते हैं कि तिब्बत के बारे में चीन सरकार जो कुछ कह रही है वह सत्य है तो मैं अपनी सभी गतिविधियां बंद कर दूंगा और चीन से क्षमा मांग लूंगा।''

एक प्रश्न का उत्तर देते हुए तिब्बती नेता ने जापान के प्रधानमंत्री युकिओ हातोयामा के उस प्रस्ताव के प्रति पूर्ण समर्थन व्यक्त किया जिसमें उन्होंने कहा था कि वह जापानी लोगों की प्रसन्नता के आधार पर ही अपनी सरकार की नीतियों का विकास करेंगे।

दलाई लामा ने एक अन्य प्रश्न के उत्तर में कहा कि शिक्षा केंद्रीय महत्व की बात है। आधुनिक शिक्षा को मस्तिष्क का विकास करने के साथ ही जीवंतता और आंतरिक मूल्यों का विकास करने में भी सक्षम होना चाहिए।

चीनी राष्ट्रपति हू जिंताओ के समरस समाज के निर्माण के आहवान की प्रशंसा करते हुए तिब्बती नेता ने कहा समरसता पीपुल्स लिबरेशन आर्मी की बंदूकों से नहीं बल्कि सत्य और विश्वास से आयेगी। चीन की एक समाचार एजेंसी के संवाददाता से सीधे संवाद में धर्मगुरु ने कहा कि चीन के एक अरब से ज्यादा लोगों को सही सूचनाएं पाने का अधिकार है न कि केवल कम्युनिस्ट प्रचार।

धर्मगुरु की इसी माह भारत के पूर्वोत्तर राज्य अरुणाचल प्रदेष की पूर्व.नियोजित यात्रा पर उठ रहे विवाद से जुड़े एक प्रश्न के उत्तर में तिब्बती नेता ने चीन की आपत्तियों पर आश्चर्य व्यक्त किया।

उन्होंने कहा कि सन् 1962 में भारत–चीन युद्ध के दौरान चीनी सेना ने उन क्षेत्रों पर कब्जा किया था लेकिन उसके बाद एकपक्षीय युद्ध.विराम की घोषणा करते हुए उन क्षेत्रों को खाली कर दिया था और मौजूदा अंतरराष्ट्रीय सीमा को स्वीकार कर लिया था।

दलाई लामा ने अरुणाचल प्रदेश से अपने गहरे भावनात्मक लगाव को भी याद करते हुए कहा कि यहीं से होकर वह 1959 में भारत पहुंचे थे।

दलाई लामा भारत पर 'बोझ' नहीं बल्कि एक सम्मानित अतिथि हैं

चीनी नजरिए के खोट उसके चरित्र का हिस्सा है

क्लॉड आर्पी, *न्यू इंडियन एक्सप्रेस, 6 नवंबर 2009 से साभार*

दलाई लामा जब अरुणाचल प्रदेश की यात्रा पर वहां पहुंचे तो दिल्ली के कुछ हलकों में एक सवाल पर चर्चा होने लगीः क्या दलाई लामा भारत पर बोझ हैं? कुछ भारतीय 'राजनैतिक पंडितों' का विचार था कि दलाई लामा और उनके एक लाख तिब्बती भारत के लिए बोझ बन गए हैं। कुछ का सुझाव था कि दलाई लामा को तावांग यात्रा की इजाजत नहीं देनी चाहिए थी। उनका तर्क था कि भारत और चीन के बीच नए संबंधों में दलाई लामा अंतिम बाधा हैं।

इससे अधिक गलत सोच और कुछ नहीं हो सकती। कुछ चीनी नेताओं का भी विचार रहा है कि दलाई लामा भारत के लिए बोझ हैं। भारत में दलाई लामा के शरण लेने के 20 वर्ष बाद देंग सियाओपिंग ने उनके साथ संवाद की पहल की थी। तिब्बती अब भी इस पहल के लिए उनका आभार व्यक्त करते हैं। लेकिन हाल में जारी अमेरिकी दस्तावेजों के मुताबिक देंग दलाई लामा को पसंद नहीं करते थे।

दिसंबर 1975 में अमेरिकी राष्ट्रपति जेराल्ड फोर्ड ने अपनी चीन यात्रा के दौरान देंग सियाओपिंग से मुलाकात की थी जो उस समय उप–प्रधानमंत्री थे। देंग ने फोर्ड के सामने कुछ 'छोटे मुद्दे' रखे। उनमें से एक यह था कि दलाई लामा ने न्यूयॉर्क में अपना एक 'छोटा कार्यालय' खोल लिया है। इस पर फोर्ड ने कहा कि न्यूयॉर्क में तिब्बती कार्यालय खोलना निजी मामला है। लेकिन देंग ने कहा, ''अगर आप उन्हें वीजा देने से इनकार कर देते तो चीजें आसान हो जातीं।'' देंग ने आगे कहा, ''दलाई लामा जब तिब्बत में विद्रोह भड़काने के बाद देश छोड़कर भागे तो हम उन्हें देश छोड़ने से रोक सकते थे। लेकिन चेयरमैन माओ ने कहा कि उन्हें भागने देना ही बेहतर होगा।''

फोर्ड ने देंग से कहा, ''मैं तिब्बत पर भारत की कार्रवाई का समर्थन नहीं करता।'' इस पर देंग ने जवाब दिया, ''हम उस पर बहुत ध्यान नहीं देते क्योंकि दलाई लामा अब भारत पर बोझ बन गए हैं।''

फोर्ड ने मजाक किया, ''मैं नहीं सोचता कि आप भारत को किसी भी अतिरिक्त बोझ से छुटकारा दिलाएंगे।'' देंग का जवाब था, ''हम ऐसा करना भी नहीं चाहते। भारत को यह बोझ 100 वर्षों तक उठाने दीजिए। फिर हम इसके बारे में सोचेंगे। दलाई लामा अभी 40 साल के होंगे। हो सकता है, वे अभी 60 वर्ष तक और जिएं। इसलिए भारत को अगले 60 वर्ष तक यह बोझ और उठाने दीजिए।''

अंत में देंग ने कहा, ''दलाई लामा चाहे जो डींग मारें, वे तिब्बत के भविष्य को किसी भी तरह प्रभावित नहीं कर सकते।'' जवाब में फोर्ड ने कहा, ''उन्हें भारत में ही रहना चाहिए।'' इस पर देंग का कटाक्ष थी, ''हां, हम उनके दीर्घायु होने और वहां लंबे समय तक ठहरने की कामना करते हैं।''

जो भारतीय 'विशेषज्ञ' चीनी विचारधारा का समर्थन और तिब्बती नेता का अनादर करते हैं, वे निश्चित रूप से मूर्ख हैं। उन्हें शायद भारत और चीन के अतीत के रिश्तों के बारे में पता नहीं है। चीन दशकों से कहता कुछ रहा है और करता कुछ और रहा है। जहां चीन का अतीत (और वर्तमान) नेतृत्व भारत के साथ संबंधों को अपने हित के नजरिए से देखता रहा है, वहीं भारत के कई नेता इन संबंधों को चीन को 'चोट न पहुंचाने' के नजरिए देखते हैं।

बहरहाल, दिल्ली ने दलाई लामा को अरुणाचल यात्रा की इजाजत देकर जो साहस दिखाया उसका फल जल्दी ही सामने आ गया। वाल स्ट्रीट जर्नल ने अपने एक संपादकीय में लिखा, ''भारत ने दुनिया को दिखा दिया है कि चीन के साथ कड़ाई से कैसे पेश आना चाहिए। बीजिंग यात्रा पर जा रहे बराक ओबामा के लिए बेहतर होगा कि वे नई दिल्ली से सबक लें। मनमोहन सिंह दुनिया को दिखा रहे हैं कि चीन जब धौंसबाजी के मूड में हो तो उससे कैसे निपटा जाए।''

हमारे कुछ 'विशेषज्ञ' भले मानते हों कि चीन को शांत करने का एकमात्र तरीका समर्पण है, लेकिन यह समस्या का समाधान नहीं है। सवाल यह है कि कोई कहां तक समर्पण करेगा? बहुत पहले इतिहासकार आर.सी. मजूमदार ने लिखा था, ''चीनी संस्कृति के एक पहलू के बारे में बहुत ही कम लोगों को मालूम है। वह यह कि चीन की राजनीति आक्रामक साम्राज्यवाद की रही है। यदि किसी क्षेत्र ने संक्षिप्त अवधि के लिए ही उसकी अधीनता को स्वीकार कर लिया तो चीन ने हमेशा के लिए उसे अपने साम्राज्य का अंग मान लिया। वह मौका आने पर एक हजार साल बाद भी उस क्षेत्र पर दावा करने से नहीं चूकता।''

यह तय है कि भारत को ओबामा प्रशासन के मुकाबले भारत ने दलाई लामा की यात्रा के मामले में अटल रहकर दुनिया को रास्ता दिखाया है। उसने स्पष्ट किया कि तिब्बती नेता उसके लिए बोझ नहीं, बल्कि सम्मानित अतिथि हैं। जैसाकि देंग ने कहा था, भारत उनका बोझ वर्षों तक उठाने के लिए तैयार है।

जो भारतीय 'विशेषज्ञ' चीनी विचारधारा का समर्थन और तिब्बती नेता का अनादर करते हैं, वे निश्चित रूप से मूर्ख हैं। उन्हें शायद भारत और चीन के अतीत के रिश्तों के बारे में पता नहीं है। चीन दशकों से कहता कुछ रहा है और करता कुछ और रहा है। जहां चीन का अतीत (और वर्तमान) नेतृत्व भारत के साथ संबंधों को अपने हित के नजरिए से देखता रहा है, वहीं भारत के कई नेता इन संबंधों को चीन को 'चोट न पहुंचाने' के नजरिए देखते हैं।

थिएन अनमन चौक में चीनी खंभे – रंगबिरंगा सफेद झूठ

60वीं सालगिरह : स्टालिन के 'सोवियत नाटक' का चीनी संस्करण

जब राष्ट्रीय एकता के स्तंभ टोटेम में बदल गए

तिब्बत की चर्चित और साहसी लेखिका **सेरिंग वोज़ेर** ने 30 सितंबर 2009 को रेडियो फ्री एशिया के लिए एक लेख लिखा था जिसका अनुवाद ***'हाई पीक्स प्योर अर्थ'*** ने किया और उसे 12 अक्तूबर 2009 को अपने ब्लॉग पर डाला। यह लेख चीनी जन गणराज्य के 60वें स्थापना दिवस के मौके पर 1 अक्तबूर को बीजिंग में मनाए गए जश्न से संबंधित है। बीजिंग में 56 स्तंभ खड़े किए गए थे जो जातीय एकता के प्रतीक थे। पश्चिमी मीडिया ने इन स्तंभों पर ध्यान नहीं दिया। लेकिन सिन्हुआ समाचार एजेंसी ने इन स्तंभों को व्यापक कवरेज दिया और कई फोटो प्रकाशित किए। ***तिब्बत–देश*** में उनके इस लेख का हिंदी अनुवाद पेश किया जा रहा है।

राष्ट्रीय एकता के ये स्तंभ चाहे जितने विशाल या अभिभूत कर देने वाले हों, सचाई को दबाने की हुकूमत की इच्छा पर परदा नहीं डाल सकते।

सन् 1949 से चीन के राष्ट्रीय समारोहों के इतिहास में इस तरह का जश्न कभी नहीं देखा गया। इस साल के समारोह में थिएन आनमन चौक पर चटक रंगों में रंगे 56 विशाल स्तंभ खड़े किए गए थे। राष्ट्रीय एकता के इन 56 स्तंभों को खड़ा करने का मकसद 56 कौमों के बीच समानता, एकता और सौहार्द दर्शाना था। लेकिन यह तिब्बत की पिछले साल की घटनाओं और शिंजियांग की इस साल की घटना से सीधे जुड़ा था।

चीन की 56 कौमों में तिब्बती और उइगुर सबसे अधिक अस्थिर तत्व बन गए हैं। धीरे–धीरे संचित आक्रोश के फैलने और जातीय समूहों के संबंधों में खटास आने से केंद्रीय और स्थानीय सत्ता में बैठे लोगों की नींद उड़ गई है। एक तरफ, इन लोगों ने समस्याग्रस्त अल्पसंख्यक क्षेत्रों में क्रूर और निरंकुश रवैया अपनाया है जिसके कारण कई स्थान लंबे समय से फौज के नियंत्रण में हैं। दूसरी तरफ, वे गिरगिट की तरह रंग बदलते रहे हैं। जब वे बाहरी दुनिया के लिए नौटंकी करते हैं तो ''रात में चकाचौंध कर देने वाली आतिशबाजी करते हैं और आकाश में लालटेन जलाते हैं। इस नौटंकी में अल्पसंख्यक भाई–बहन चुहलबाजी और तालमेल के साथ नृत्य करते हैं।''

राष्ट्रीय एकता के चमचमाते हुए ये 56 स्तंभ सभी अल्पसंख्यकों की महान एकता के बारे में माओ से–तुंग की विचारधारा के प्रतीक हैं। सिन्हुआ समाचार एजेंसी ने इन स्तंभों के बारे में विशेष रूप से एक लेख जारी किया। लेख में इन स्तंभों को एक विशेष अर्थ देते हुए उन्हें ''जन गणराज्य के हर नागरिक का प्राचीन टोटेम चिह्न बताया गया है।'' ''इस तरह का स्तंभ अल्पसंख्यक जनता की अंतरतम उम्मीदों को एक पवित्र शक्ति के साथ टोटेम में बदल देता है। हमने बड़े जीवट के साथ राष्ट्र की समृद्धि के लिए प्रयास किया है। हमारा यह प्रयास उस शानदार इतिहास और महान सोच से प्रेरित है जिसे हमें टोटेम ने मुहैया कराया है।

फिर भी, ऐसा माना जाता है कि इस कथित 'टोटेम' का मूल अर्थ प्राचीन समाज और आदि मानव जाति की मान्यताओं और अंधविश्वास से जुड़ा है। 'टोटेम' की पूजा को एक तरह से मुख्य जनजातियों का रीति–रिवाज या धामिर्क कर्मकांड माना जाता है। लेकिन अज्ञेयवाद को मानने और एक आधुनिक तथा प्रगतिशील संस्कृति के प्रतिनिधित्व का दावा करने वाले चीनी कम्युनिस्टों के लिए इसे व्यर्थ समझा जाना चाहिए और इतिहास के कूड़े के ढेर में फेंक दिया जाना चाहिए। इसका इस्तेमाल आम जनता के अंध विश्वासों का लाभ उठाने में नहीं किया जाना चाहिए।

यह बात सही है कि कम्युनिस्ट धर्म विरोधी झंडा बुलंद किए रहते हैं। लेकिन इसके पीछे उद्देश्य यह है कि उनका अपना नया धर्म विश्व को आपस में जोड़ सके। माओ युग से कम्युनिस्टों ने धीरे–धीरे एक 'आध्यात्मिक एटम बम' का निर्माण किया और लोगों के दिलो–दिमाग को जीत लिया। आज के राष्ट्रीय एकता के स्तंभ और कुछ नहीं, बल्कि इस तरह के 'आध्यात्मिक एटम बम' हैं। इनका उद्देश्य, जैसाकि हन्नाह अरेंद ने कहा है, ''भावनात्मक रूप से लोगों को आकर्षित करने के साथ–साथ एक नए तरह की राष्ट्रवादी भावना पैदा करना है।''

बहरहाल, राष्ट्रीय एकता के ये स्तंभ, जिन्हें बार–बार पैदा होने वाली अल्पसंख्यक समस्याओं के मद्देनजर

खड़ा किया गया है, चाहे जितने विशाल या अभिभूत कर देने वाले हों, सचाई को दबाने की हुकूमत की इच्छा पर परदा नहीं डाल सकते। इसके उलट, वे एक वास्तविक संकट को सामने लाते हैं। जरूरत से ज्यादा दूर जाना उतना ही नुकसानदायक होता है जितना कि पर्याप्त दूर न जाना। कोई व्यक्ति जितना ही छिपाने की कोशिश करता है, उतना ही अधिक उसका पर्दाफाश होता है। और कोई व्यक्ति जितना ही चालाक बनने की कोशिश करता है, वह उतनी ही बड़ी गलती करता है। अन्य अल्पसंख्यक क्षेत्रों सहित तिब्बत और शिंजियांग में हुई घटनाओं से जो बात सामने आई है, वह गुप्त उद्देश्य वाले लोगों की साजिश नहीं है। जब तक सत्ता में बैठे लोग नेक इरादे से 'समानता, एकता और सौहार्द' के सिद्धांत को लागू नहीं करेंगे और समस्याओं को नहीं सुलझाएंगे, तब तक राष्ट्रीय एकता के ये 56 स्तंभ महज दिखावा ही रहेंगे।

एक अंतरराश्ट्रीय चीन विषेशज्ञ का कहना है कि लोहित रंग के ये 56 स्तंभ दरअसल रोमन साम्राज्य के वैभव की याद दिलाते हैं और अपने आकार–प्रकार से साम्राज्यवादी ताकत के प्रतीक लगते हैं। चीनी हुकूमत इनके जरिए यह बता रही है कि वह हर चीज पर विजय पाना चाहती है। एक ग्रामीण चीनी व्यक्ति का कहना था कि चटख लाल रंग के ये 56 स्तंभ दरअसल सुनहरे रंग के 56 गदा हैं। इनमें से हर गदा एक–एक अल्पसंख्यक पर चोट कर रहा है। एक चीनी बुद्धिजीवी ग्रेट हॉल ऑफ द पीपुल में देखे एक नाटक को याद करता है। वहां उसने देखा कि बड़ी संख्या में लोग अल्पसंख्यकों के उत्सव के कपड़े पहने नृत्य कर रहे हैं और एकस्वर में विजय गीत गा रहे हैं। वह बुद्धिजीवी आलोचना करते हुए कहता है, ''क्या यह केंद्रीय साम्राज्य का आधुनिक रूप नहीं है जिसमें सभी राज्यों को केंद्रीय हुकूमत का गुणगान करते हुए दिखाया जा रहा है? आजकल कौन देश इतनी मेहनत कर हर अल्पसंख्यक समुदाय से कलाकारों को चुनेगा, उन्हें अप्रचलित कपड़े एवं आभूषण पहनाएगा और फिर उनसे राजधानी में नृत्य एवं संगीत का प्रदर्शन करवाएगा?

मेरे जहन में केवल एक ही देश का नाम आता हैः शक्तिशाली और संपन्न सोवियत संघ का। अतीत में इस देश के सभी अल्पसंख्यक समुदाय एक–एक कर मंच पर आते थे और ''सभी अल्पंख्यकों के हितैषी'' जोसेफ स्टालिन का बड़े उत्साह से गुणगान करते थे। इस सारी नाटकबाजी के बावजूद सोवियत संघ का साम्राज्य ढह गया।''

आइए, चीनियों को नहीं, दलाई लामा को अपनाएं

सोसायटी एंड रिलिजन पत्रिका की रोचक टिप्पणी

पत्रिका के 3 नवंबर, 2009 से साभार

चीन भारत का प्राकृतिक पड़ोसी नहीं है। तिब्बत है। भारत को यह नहीं भूलना चाहिए। अच्छाई हमेशा बुराई को परास्त कर देती है। यह ऐसा तथ्य है जिसे भारत को नहीं भूलना चाहिए। इस बात का ख्याल करते हुए कि बुराई को परास्त करने में अच्छाई को समय लगता है, भारत को इतिहास के ठीक पक्ष का साथ देना चाहिए। चीन की प्रकृति ध्वंसकारी है। तिब्बत की प्रकृति शांतिपूर्ण है। बुराई हमेशा अपने नाश को आकर्षित करती है। ऐसे में यह कवल समय की बात है जब चीन नष्ट हो जाएगा। तिब्बत की जीत होगी। बिल्कुल वैसे ही जैसे शांति हमेशा जीतती आयी है।

भारत को प्राकृतिक सिद्धांतों के विपक्ष में भी नहीं खड़े होना चाहिए। उसे शांति की रक्षा और विकास के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए। ध्वंसकारी चीन के साथ शांति बनाये रखने के लिए तिब्बत प्राकृतिक अवरोधक है।

दलाई लामा अलगाववादी हैं। वह बुरे और अच्छे को अलग करते हैं। क्या भारत को देश के किसी राज्य में शांति की साक्षात् मूर्ति को जाने से रोकना चाहिए? वह अरुणाचल प्रदेश या तवांग जहां भी उचित समझें उन्हें जाने देना चाहिए।

यह स्वाभाविक होगा कि भारत जहरीले चीनी खिलौनों या नाभिकीय अस्त्रों के बजाय परम पावन दलाई लामा को अपनाये। चीन घृणा को जन्म देता है। दलाई लामा प्रेम को जन्म देते हैं। दलाई लामा को रोकना गांधी की फिर से हत्या करने जैसा होगा।

शांति के आत्मविश्वास को देखिये। भारत के प्रधानमंत्री की चीनी प्रधानमंत्री से मुलाकात पर दलाई लामा को बेचैनी नहीं होती। दूसरी ओर अस्थिरचित्त चीन है जिसे हमेशा दलाई लामा से डर लगता है। वेन जिआबाओ भारत के साथ 'स्वस्थ और स्थायी' संबंधों का विकास करना चाहते हैं। स्वास्थ्य और स्थायित्व का संबंध शांति से है। लेकिन शांति का नाम तो दलाई लामा है। दलाई लामा से डरने वाला चीन शांति कैसे प्रेरित कर सकता है? भय की उपस्थिति में शांति कैसे विकसित हो सकती है? शांति कैसे विकसित की जा सकती है जब चीन ने तिब्बत में उसे बंधक बना रखा हो?

दलाई लामा अलगाववादी हैं। वह बुरे और अच्छे को अलग करते हैं। चीन घृणा को जन्म देता है। दलाई लामा प्रेम को जन्म देते हैं। दलाई लामा को रोकना गांधी की फिर स हत्या करने जैसा होगा। दलाई लामा से डरने वाला चीन शांति कैसे प्रेरित कर सकता है? भय की उपस्थिति में शांति कैसे विकसित हो सकती है? शांति कैसे विकसित की जा सकती है जब चीन ने तिब्बत में उसे बंधक बना रखा हो?

धर्मशाला में करवट ले रही है तिब्बती स्वतंत्रता संग्राम की नई पीढ़ी

आईआईएमसी के मीडिया छात्र धर्मशाला यात्रा में 'निर्वासित तिब्बत' से रूबरू हुए

भारतीय जन संचार इंस्टीट्यूट, नई दिल्ली के अंग्रेजी विभाग के 28 छात्रों और तीन अध्यापकों ने धर्मशाला का भ्रमण किया। उनका यह भ्रमण नई दिल्ली स्थित भारत तिब्बत समन्वय कार्यालय द्वारा 5 से 8 नवंबर तक आयोजित वार्षिक कार्यक्रम का एक हिस्सा था।

अपने शैक्षिक भ्रमण के पहले दिन छात्रों ने तिब्बती स्वागत केंद्र देखा जहां तिब्बत से आने वाले शरणर्थियों को ठहराया जाता है। केंद्र के प्रभारी श्री मिंगयूर ने उन्हें बताया कि तिब्बत के लोग अपने देश से पलायन करने के बाद किन मुश्किल हालात का सामना कर रहे हैं। इस दौरान छात्रों की सुल्त्रिम दोरजी से मुलाकात भी कराई गई, जो हाल ही में तिब्बत से भाग कर यहां आए थे तथा वहां पिछले साल के प्रदर्शनों के दौरान उनकी बांह में गोली भी लगी थी। छात्रों को बताया गया कि इस तरह की परिस्थितियों से वहां के लोग लगातार जूझ रहे हैं। अंतरराष्ट्रीय संबंध और सूचना विभाग के सूचना सचिव ने उन्हें तिब्बत के इतिहास और केंद्रीय तिब्बती प्रशासन के लोकतांत्रिक ढांचे के बारे में भी जानकारी दी।

दूसरे दिन छात्रों को तिब्बती बौद्ध धर्म की स्वतंत्रता आंदोलन में भूमिका, दुनिया के पर्यावरण और पारिस्थितिकी में तिब्बत पठार के महत्व तथा तिब्बत के भीतर मानवाधिकारों की स्थिति पर जानकारी दी गई।

छात्रों ने तिबेतन चिल्ड्रेन विलेज स्कूल (टीसीवी) भी देखा जहां उन्हें बताया गया कि तिब्बत से निर्वासित बच्चों को किस तरह आधुनिक शिक्षा दी जा रही है। तीन दिवसीय इस कार्यक्रम के आखिरी दिन छात्रों की तिबेतन यूथ कांग्रेस, तिबेतन विमेन्स एसोसिएशन और पूर्व राजनीतिक बंदियों के आंदोलन के प्रतिनिधियों से मुलाकात भी कराई गई। हर किसी ने महसूस किया कि भले ही इन तीनों संगठनों के सिद्धांत और कार्य करने के तरीके अलग हैं, लेकिन सबका उद्देश्य एक है और वह है तिब्बत।

भारत तिब्बत समन्वय कार्यालय द्वारा मीडिया स्टूडेंट प्रोग्राम आयोजित करने का उद्देश्य तिब्बत के बारे में छात्र पत्रकारों को जागरूक करना है, जो जल्द ही पत्रकारिता की मुख्य धारा से जुड़ने जा रहे हैं।

छात्रों ने तिबेतन चिल्ड्रेन विलेज स्कूल (टीसीवी) भी देखा जहां उन्हें बताया गया कि तिब्बत से निर्वासित बच्चों को किस तरह आधुनिक शिक्षा दी जा रही है। तीन दिवसीय इस कार्यक्रम के आखिरी दिन छात्रों की तिबेतन यूथ कांग्रेस, तिबेतन विमेन्स एसोसिएशन और पूर्व राजनीतिक बंदियों के आंदोलन के प्रतिनिधियों से मुलाकात भी कराई गई।

पिघलते हिमनदों से अब चीन भी चिंतित हो रहा है

इस साल के शुरू में जब चीन के सरकारी टेलिविजन का एक खोजी दल दूरदराज के तिब्बती पठार में अपना रास्ता बना रहा था तो अन्वेशकों ने जो कुछ पाया, उससे वे चकित रह गए।

तिब्बती पठार को उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों के बाद दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा हिम भंडार कहा जाता है। इसके बावजूद, जैसाकि चीनी विज्ञानियों का कहना है, यह 'तीसरा ध्रुव' पृथ्वी पर अन्य जगहों की तुलना में तेजी से गर्म हो रहा है।

टीवी दल ने पाया कि हिमनद पिघलने से चट्टानें नंगी हो गई हैं, झीलें सूख गई हैं, घास का मैदान रेगिस्तान में तब्दील हो गया है, मवेशी मर रहे हैं और किसान कुपोषण के शिकार हो गए हैं।

टीवी दल ग्लोबल वार्मिंग के नतीजों को दर्शाने वाले विजुअल्स के साथ जब लौटा तो सेंसर ने कार्यक्रम निर्माताओं को उनके प्रसारण की खुली छूट दे दी। इस प्रसारण ने कम्युनिस्ट पार्टी के नेताओं का ध्यान आकर्षित किया और कोपेनहेगन शिखर वार्ता से ठीक पहले चीन में जलवायु परिवर्तन पर बहस पैदा कर दी।

इसका अर्थ यह है कि राष्ट्रपति बराक ओबामा की बीजिंग यात्रा के दौरान चीन उन्हें उन तमाम कदमों से अवगत कराएगा जिन्हें वह ग्लोबल वार्मिंग की दर कम करने के लिए उठा रहा है। हालांकि धनी देश बीजिंग को कार्बन उत्सर्जन की निर्धारित दर को स्वीकार करने के लिए कह रहे हैं, लेकिन चीन राष्ट्रपति ओबामा के सामने इस पर अपनी असहमति ही व्यक्त करेगा। चीनी मीडिया पहले से ही इस शर्त को राजनैतिक रूप से अस्वीकार्य बता रहा है।

बहरहाल, तिब्बत के पठार पर जिस रफ्तार से परिवर्तन हो रहा है, उससे चीनी नेता चिंतित हो उठे हैं। वे इस बात को समझ रहे हैं कि अगर जलवायु परिवर्तन को रोकने के लिए कारगर कदम नहीं उठाए गए तो खुद चीन का भविष्य खतरे में पड़ जाएगा।

चीन में दशकों के उद्योगीकरण से वहां की नदियां विषाक्त हो गई हैं और आसमान काला पड़ गया है। इसलिए चीनी नेता 'हरित' नीति के पक्ष में जनमत बनाने की कोशिश कर रहे हैं। मसलन, अन्वेशकों ने पाया कि धुएं वाले उद्योगों और लाखों घरों के कारण तिब्बती पठार के हिमनदों में काले कार्बन का स्तर 1990 के दशक से बहुत बढ़ गया है।

माइकल शेरिडन, संडे टाइम्स (यूके), 8 नवंबर 2009